The Academic
International Journal of Multidisciplinary Research

An Online Peer Reviewed / Refereed Journal
Volume 3 | Issue 12 | December 2025
ISSN: 2583-973X (Online)
Website: www.theacademic.in

आध्यात्मिक परिप्रेक्ष्य में पर्यावरण संरक्षण

डॉ० दीपा गुप्ता

एसोसिएट प्रोफेसार, प्राचीन भारतीय इतिहास संस्कृति एवं पुरातत्व विभाग, कन्या गुरुकुल हरिद्वार

गुरुकुल कांगडी (समविश्वविद्यालय) हरिद्वार

DOI : https://doi.org/10.5281/zenodo.18240805

ARTICLE DETAILS

Research Paper

Accepted: 25-12-2025

Published: 10-01-2026

Keywords:

इनवायरमेंट (*Environment),* भौतिक-जैविक, सूक्ष्म-स्थूल, धर्मिक अनुष्ठान, त्यौहार, पूजा-पद्मति, यज्ञ पर्यावरण शोधक, बौद्धिक विकास, पर्यावरण प्रदूषण, ध्वनि प्रदूषक साधन, कार्बन-डाई आक्साइड, ऑक्सीजन

ABSTRACT

आध्यात्मिक परिप्रेक्ष्य में पर्यावरण संरक्षण एक नैतिक दायित्व है जो प्रकृति को केवल संसाधन नहीं बल्कि पवित्र और परस्पर जुडा हुआ मानता है। यह दृष्टिकोण अंहिसा, प्रकृति के प्रति सम्मान और सभी जीवों के प्रति करुणा पर आधारित है। जहां पर्यावरण को नुकसान पहुंचाना आध्यात्मिक रूप से गलत माना जाता है। पर्यावरण एक वैज्ञानिक शब्द है- पर्यावरण अर्थात एक ऐसा प्राकृतिक वातावरण जिसके अंतर्गत सभी प्राणी जीवन धारण करते है, श्वास लेते है, खाते-पीते और जीवन जीते है। वही पर्यावरण कहलाता है। आध्यत्मिक परिप्रेक्ष्य में जब हम धार्मिक अनुष्ठान यज्ञ करते है तो पर्यावरण पर्याप्त रूप से शुद्ध होता है। प्राचीन ऋषियों ने कहा था कि वृक्ष-वनस्पतियां पर्यावरण संतुलन के महत्वपूर्ण स्तम्भ है। उन्होंने वृक्ष वनस्पतियों को मनुष्य के लिए एक सजग प्रहरी के समान बतलाया है। न केवल वृक्ष-वनस्पतियों में वरन धार्मिक व्रत, अनुष्ठान, त्यौहार, पूजा-पद्धति इत्यादि सभी क्रियाओं में पर्यावरण संरक्षण की व्यापक भावना समायी हुई है। श्रीकृष्ण का गोवर्धन पर्वत की पूजा का संदेश पर्यावरण की महत्ता का ही प्रतीक है। ये पर्वत शिखर मेघों को रोककर वर्षा के कारक बनते है और यही वर्षा वायु जल को शुद्ध करती है। जिसके फलस्वरूप पर्यावरण संरक्षित होता है। वस्तुतः आध्यत्मिक परिपेक्ष्य ही पर्यावरण को संरक्षित रखने का एक सुदृढ उपाय है। जिसके द्वारा मानव जीवन को सुरक्षित रखा जा सकता है।

Introduction:

अंग्रेजी के इनवायरमेंट (Environment) शब्द के अर्थ में नवनिर्मित 'पर्यावरण' शब्द भले ही आधुनिक हो किन्तु भारतीय परम्परा में पर्यावरण चेतना विभिन्न शब्दों के रूप में वेदों के काल से ही पायी जाती है।

'पर्यावरण' एक वैज्ञानिक शब्द है-इसे इस प्रकार परिभाषित किया जा सकता है- "हमारे चारों ओर विद्यमान समस्त भौतिक-जैविक, सूक्ष्म स्थूल प्राकृतिक पदार्थों का अस्तित्व और उससे उत्पन्न स्थितियाँ-परिस्थितियाँ तथा उनका समन्वित प्राकृतिक वातावरण, जिसके अन्तर्गत सभी प्राणी जीवन धारण करते हैं, श्वास लेते हैं, खाते-पीते और जीवन जीते हैं, वह पर्यावरण कहलाता है।"

"बंकिमचन्द्र, चटर्जी" के 'सुजलां सुफलां मलयजशीतलां शस्यश्यामलां' में जिस पृथ्वी का चित्र अंकित है, उसमें पर्यावरण संरक्षण का समग्र जीवन दर्शन निहित है। आधुनिकतम वैज्ञानिक उपायों से भौतिक संसाधनों का विकास तो हुआ है, देश की जनसंख्या का एक बहुत बड़ा भाग छोटे-बड़े उद्योगों में लगा हुआ है। परन्तु यदि खुली हवा में सांस न लिया जा सके, प्रकृति प्रदत्त जल पिया न जा सके, तथा पृथ्वी से उत्पन्न अन एवं फल खाया न जा सके तो विकास की सभी व्यवस्थायें अर्थहीन हो जायेंगी।

प्राचीन ऋषियों ने पर्यावरण की महत्ता को समझकर ही वन-उपवन लगाने की परम्परा बनाई थी। इसमें कोई संदेह नही कि पर्यावरण संरक्षण में वृक्षों वनस्पतियों का एक महत्वपूर्ण योगदान रहा है। पर्यावरण के प्रमुख घटक वृक्ष वनस्पतियों के संरक्षण के संदर्भ मे प्राचीन दृष्टिकोण आज भी अत्यन्त उपयोगी एवं व्यावहारिक हैं। ज्ञातव्य है कि कुछ वृक्षों में एक रसस्त्राव 'मेलाटोनिन' पाया जाता है।[1] यह हारमोन केले, पीपल और बरगद जैसे पेड़ों में सर्वाधिक परिमाण पाया जाता है। शायद इसीलिए धार्मिक और आध्यात्मिक कृत्यों में इनका ज्यादा महत्त्व बताया गया है। ज्यादातर धर्मकृत्यों में केले के तने और पत्तियों के प्रयोग का विधान है। भगवान् बुद्ध को बुद्धत्व की प्राप्ति बरगद के नीचे ही प्राप्त हुई थी वैज्ञानिकों की मान्यता है कि यह हारमोन वायु एवं जल को शुद्ध करके पर्यावरण संरक्षण का कारण बनते हैं, और जिसके परिणाम स्वरूप इसी हारमोन की वजह से व्यक्ति को चिरयुवा बनाया जा सकता है।

'मत्स्यपुराण' में पुत्रों से भी अधिक वृक्षों के महत्व को बतलाया हैं। 'ब्रह्मवैवर्त पुराण'में वर्णित है कि कुपुत्र या धर्म विमुख पुत्र से अपयश की आशंका रहती है लेकिन वृक्ष रूपी पुत्र तो सदा कल्याणकारी होते हैं। इस प्रकार वृक्षों की पुत्र रूप से प्रतिष्ठा तथा इससे भी बढ़कर उनके प्रति कृतज्ञता एवं श्रद्धा का भाव प्रत्येक पुराण में मिलता हैं।

'महाभारत' के 'अनुशासन पर्व' में तो वृक्षों को पुत्र के समान मनुष्य को तारने वाला तथा यश प्रदान करने वाला बताया गया हैं।[2]

उपरोक्त विवरण से स्पष्ट है कि वृक्ष-वनस्पतियाँ पर्यावरण संतुलन के महत्वपूर्ण स्तंभ है, यह कहना चाहिए कि ये मनुष्य के लिए एक सजग प्रहरी के समान हैं। आधुनिक विज्ञान इस तथ्य को इस रूप में स्वीकार करता है कि वृक्ष-वनस्पतियाँ आदि कार्बन-डाई आक्साइड़ आदि हानिकारक गैसों को शोषित कर लेते हैं और प्राणियों के लिए जीवनदायक वायु ऑक्सीजन उपलब्ध कराते हैं। इस प्रकार वृक्ष वनस्पतियाँ प्राणियों के प्राण हैं। ब्राह्मण ग्रन्थों में भी कितने स्पष्ट शब्दों में वृक्ष वनस्पतियों को प्राण घोषित किया है।

'प्राणो वै वनस्पतिः'[3] 'प्राणो वनस्पतिः'[4]

न केवल वृक्ष-वनस्पतियों में वरन् धार्मिक व्रत, अनुष्ठान, त्यौहार, पूजा-पद्धति इत्यादि सभी क्रियाओं में पर्यावरण संरक्षण की व्यापक भावना समाई हुई है। श्री कृष्ण का गोवर्धन पर्वत की पूजा का संदेश पर्यावरण के प्रति इसी सजगता का निदर्शक है। ये पर्वत शिखरही मेघों को रोककर वर्षा के कारक बनते हैं और यही वर्षा वायु जल को शुद्ध करती है जिसके परिणाम स्वरूप पर्यावरण संरक्षित होता है और मानव तथा प्रकृक्ति के लिए लाभप्रद सिद्ध होता हैं।

यही नहीं पर्यावरण की शुद्धता का रहस्य भी हमारे त्यौहारों में छिपा हैं। उदाहरण के लिए होली का त्यौहार ही लें। शीतकाल का संचित कफ वसन्त की गरमी पाकर पिघलता हैं उसके सब कीटाणु शरीर में फैलकर नाना प्रकार के रोग पैदा करते हैं। विशेषकर बालकों को भिन्न भिन्न प्रकार के रोग इस मौसम में होते हैं। शरीर में उत्साह लाना, कूदना, अग्नि जलाकर उसके पास रहना, ऊँची आवाज से गाना आदि सभी काम कफ के निवर्त्तक हैं। इन वैज्ञानिक अनुष्ठानों से कफ रोगों की निवृत्ति में किसी को संदेह नहीं हैं।

दूसरी बात यह है कि जब हम धार्मिक अनुष्ठान यज्ञ करते हैं तो पर्यावरण पर्याप्त रूप से शुद्ध होता है वेदों में तो यज्ञों का प्रयोजन वायु और जल की शुद्धि ही बतलायी है जब हम यज्ञ करते हैं, तथा उसमें विभिन्न प्रकार की औषधियों का सेवन करते हैं तो वे औषधियां या आहुतियाँ वायुमंडल में पहुँचकर सहस्रगुणित हो जाती हैं और वायु तथा जल को शुद्ध करती हैं, जिसके परिणाम स्वरूप वृष्टि होकर हमें उत्तम प्रकार की औषधियाँ और अन्न आदि प्राप्त होते हैं या यह कहा जा सकता है कि जब हम यज्ञ करते हैं और उसमें विभिन्न प्रकार की आहुतियां डालते हैं या इनका सेवन करते हैं तो वे आहुतियाँ अंतरिक्ष में वायु को शुद्ध करती है, और मेघो के जल को पवित्र करती है जिसके फलस्वरूप वृष्टि होकर हमें उत्तम प्रकार की औषधि तथा अन्न आदि उत्पन्न होते है और पृथ्वी को भी शुद्ध प्राण वायु द्वारा शुद्धता तथा पवित्रता प्राप्त होती रहती हैं।

इसीलिए यज्ञ के पर्यावरणीय महत्त्व को स्वीकार किया गया है। इस विषय से संबंधित सैंकड़ों स्वतंत्र पुस्तकें स्वदेशी और विदेशी लेखकों द्वारा लिखी गई हैं। यही कहा जायेगा कि वेदशास्त्रों ने पर्यावरणीय घटकों की शुद्धता के लिए हमें एक अमोघ उपाय 'यज्ञ' के रूप में प्रदान किया हैं। यज्ञ एक आध्यात्मिक उपासना का साधन होने के साथ-साथ

पर्यावरण को शुद्ध करने, उसे रोग और कीटाणुरहित रखने तथा प्रदूषण रहित रखने का एक अप्रतिम साधन है। यज्ञ एक ऐसा मोक्षसाधक, परोपकारमय तथा पर्यावरण शोधक दैनिक अनिवार्य कर्तव्य हैं जिसे शास्त्रों में "यज्ञो वै श्रेष्ठतम कर्म" कहकर जीवन का श्रेष्ठातिश्रेष्ठ कर्त्तव्य घोषित किया है[5] वेदो में पर्यावरणीय तत्वों को यज्ञ की हवियों से युक्त कर शुद्ध रखने का निर्देश दिया गया है।[6]

"हविष्मतीरिमा आपो हविष्मां आ विवासति ।

हविष्मान् देवोऽध्वरो हविष्मां अस्तु सूर्यः "।।

अर्थात्-यज्ञीय हवियों के द्वारा हम जलों को, आकाश को, सूर्य आदि को हविष्मान् करें जिससे उनमें शुद्धि होकर प्रदूषति अथवा हानिकारक तत्व नष्ट हो जाये।

वेदों से लेकर लौकिक साहित्य तक समस्त भारतीय साहित्य यज्ञ की महिमा, गुणों और लाभों से भरा पड़ा हैं।

प्राणियों की प्राणरक्षा में सहायक और पर्यावरण को अनुकूल बनाने में उपयोगी होने के कारण 'शतपथ' ब्राह्मण में कहा है- "यज्ञो हि सर्वाणि भूतानि भुनक्ति।"[7]

अर्थात्-यज्ञ सभी प्राणियों का पालन-पोषण रक्षण करता है।

"यज्ञो वै विशो यज्ञे हि सर्वाणि भूतानि विष्टानि" शतपथ ब्राह्मण[8]

अर्थात् यज्ञ ही प्रजाएँ हैं; यज्ञ में सभी प्राणी समाविष्ट हैं, अर्थात् यज्ञ उनके जीवन का एक महत्वपूर्ण रक्षक तत्त्व हैं। इस प्रकार उपनिषदों में धर्म के आधारभूत प्रमुख तीन स्कंधों में यज्ञ को प्रथम स्तंभ घोषित किया गया हैं। इन उदाहरणों से हमें पर्यावरण संरक्षण के लिए यज्ञ की महत्ता और अपरिहार्यता का बोध होता है।

'छान्दोग्य उपनिषद्' में यज्ञाग्नि में घृताहुति देने का आदेश हैं[9] बृहदारण्यक उपनिषद' में यज्ञाग्नि को सब प्रदूषणों, अशुद्धियों का नाशक और सुख, शांति, आरोग्यायक घोषित किया हैं। पर्यावरण शोधन में यज्ञों के निर्विवाद महत्त्व को देखते हुए आज यह बलपूर्वक कहा जा सकता है कि यज्ञों के युग को लौटाना आवश्यक हो गया हैं। यज्ञों की उपयोगिता आज के युग के लिए अपरिहार्य हैं। प्रदूषण-निरोधक भौतिक यंत्रों से प्रदूषण विस्तार को तो नियन्त्रित किया जा सकता है, किन्तु उसका शोधन नहीं। वह तो यज्ञ आदि वैदिक उपायों से ही संभव है। अतः आज की प्रदूषण की समस्या को दूर करने के लिए घर-घर में दैनिक यज्ञ होने चाहिए। वृहद् यज्ञों का अनुष्ठान समय-समय पर किया जाना चाहिए। कण-कण यज्ञीय हवियों से सुवासित होगा तो प्रदूषण मुक्त विश्व होगा।

आज तेजी से बढ़ती हुई जनसंख्या वृद्धि पर्यावरण प्रदूषण का सबसे प्रमुख कारण कही जा सकती है। जनसंख्या बढ़ रही है इसीलिए वनों की अंधाधुंध कटाई हो रही है। जिससे पर्यावरण संतुलन का आधार डगमगा रहा है। समस्या है कि इतनी जनसंख्या रहे तो कहाँ? आवास के लिए भूमि चाहिए जो वनों को काटकर ली जा रही है, यह गलत है। जंगल कटेंगे, तो वर्षा घटेगी, आबादी बढ़ेगी तो उद्योग बढ़ेंगे, उद्योग बढ़ेंगे तो प्रदूषण बढ़ेगा और पर्यावरण अस्वास्थ्यकर बनता चला जायेगा। विश्व जनसांख्यिकी रिपोर्ट के अनुसार दुनिया की कुल आबादी आज से 9 हजार साल पूर्व मात्र 45 लाख थी। सन् 1501 में यह 44 करोड़, 1630 में 52 करोड़, 1855 में 98 करोड़, 1950 में 210 करोड़, 1975 में 400 करोड़, तथा 1996 में 620 करोड़ हो गई और 2007-08 तक तो न जाने कितनी बढ़ गई होगी और इसके आगे के समय के विषय में तो कुछ कहा ही नहीं जा सकता है।[(10)]

इसके अतिरिक्त विलासिता के लिए किये जा रहे अविष्कारों से भी पर्यावरण का खतरा मंडरा रहा है। पर्यावरण प्रदूषण का गंभीर एवं चिंताजनक स्त्रोत परमाणु अस्त्रों के परीक्षण निर्माण और दुर्घटना से भी जुड़ा हुआ हैं।

आज पर्यावरण प्रदूषित होने के कारण अनेकानेक बीमारियाँ विकराल रूप धारण किये हुए हैं। जो समूचे मानव के विनाश का कारण सिद्ध हो रही हैं इसीलिए आज हमें पर्यावरण संरक्षण के लिए पर्यावरण को शुद्ध बनाये रखने के लिए सजग प्रहरी की भाँति कार्य करना होगा तभी हम विभिन्न प्रकार की बीमारियों की विभीषिका से मानव को बचा सकेंगे अन्यथा नहीं। इन्हीं बीमारियों के कारण मनुष्य में शारीरिक, मानसिक क्षमता खोती जा रही हैं एक स्वस्थ पर्यावरण में पलने के कारण ही दुष्यन्त पुत्र भरत में सिंह शिशु के साथ खेलने की क्षमता रही थी।

आज का मानव पूर्णतया भौतिकता में मग्न हैं। स्वार्थ के वशीभूत, मानव अपने परिवेश के प्रति संवेदना शून्य हो गया है। पर्यावरण संरक्षण की प्राचीन महत्ताओं को अज्ञानता वश या आधुनिकता के कारण न समझकर विनाश के दलदल में फँसता चला जा रहा है। भौतिक प्रगति के इस बाघ को यदि खुला छोड़ा गया तो यह किसी को छोड़ने वाला नहीं है। आज टेक्नोलॉजी और बौद्धिक विकास व आर्थिक विकास के पीछे आध्यात्मिकता का अंकुश उसी प्रकार रखा जाये जिस प्रकार पागल हाथी की सूंड के ऊपर एक अंकुश रखा जाता है। आध्यात्मिकता का अभिप्राय केवल धार्मिक अनुष्ठानों से नहीं है, बल्कि महानता से है, इंसानियत से है तथा कर्तव्य परायणता से है।

इसीलिए हमारा कर्त्तव्य बनता है कि पर्यावरण प्रदूषण का कारण बने इन अस्त्रों-शस्त्रों के निर्माण आदि पर जो धन-बल लग रहा हैं उसको रोके और उस धन-बल को राष्ट्र में अन्यन्त्र विकास में लगायें। दूसरे प्रदूषण वृद्धि रोकने के लिए बड़े-बड़े उद्योगों को कुटीर उद्योगों में परिवर्तित किया जाये। जिससे उत्पादन में तो कमी हो सकती है किन्तु यदि दूरगामी परिणामों की दृष्टि से देखा जाये तो बड़े-बड़े उद्योगो की अपेक्षा पर्यावरण प्रदूषण में कमी अवश्य होगी। पर्यावरण शुद्ध बनाये रखने में कुटीर उद्योग सहायक सिद्ध होंगे।

ध्वनि प्रदूषक साधनों का नियंत्रित वोल्यूम में प्रयोग करें। अधिकाधिक पेड़-पौधे लगायें क्योंकि पर्यावरण की दृष्टि से हमारे सर्वाधिक रक्षक मित्र वृक्ष-वनस्पतियाँ ही है। वह ऐसा नीलकण्ठ शिव है जो स्वयं विषपान करके हमें अमृत प्रदान करता है तथा हमारी दूषित वायु को स्वयं ग्रहण करके हमें स्वच्छ आक्सीजन (प्राणवायु) प्रदान करता हैं। साथ ही वृक्ष पृथ्वी माता के भी रक्षक हैं उसकी बाढ़ों के कटान से रक्षा करते हैं। मरुस्थल को नियंत्रित करते हैं जल वायु की शुद्धि करते हैं तथा समय पर पर्याप्त वर्षा लाने में सहायक सिद्ध होते हैं और धरती की उपजाऊ शक्ति को बढ़ाते हैं। यह समझिए कि वृक्ष ऐसे देवता और बन्धु है जो दाता ही दाता हैं और हम उनके उपभोक्ता है। इसीलिए हमारा यह कर्तव्य बनता है कि घरों, खेतों संस्थाओं के परिसरों, खाली भू भागों, सार्वजनिक स्थानों तथा मार्गो पर अधिकाधिक पेड़-पौधे लगाकर अपनी भावी पीढ़ियों के जीवन को सुरक्षित एवं स्वस्थ बनायें। हरे भरे पेड़-पौधों को न काटें। यदि काटें तो उसके बदले में उतने ही वृक्ष अवश्य लगायें।

'अंततः यही कहा जा सकता है कि पर्यावरण के परिशोधन के लिए प्राचीन ऋषि चिंतन को जन सामान्य के चिंतन में उतारा जा सके तो पर्यावरण की शुद्धता के साथ-साथ कर्त्तव्य की निकृष्टता तथा चिंतन की भ्रष्टता का परिष्कार भी संभाव्य हैं। प्राचीन चिन्तन की सार्थकता और उद्देश्य को समझ लेने पर शायद हम पर्यावरण को बचा पायेंगे और मानव जीवन को सुरक्षित कर सकेंगे।

सन्दर्भ-संकेत

- द्रष्टव्य अखण्ड ज्योति मासिक अक्टूबर-1996 पृष्ठ संख्या-17
- 2.महाभारत अनुशासन पर्व 30
- 3.ऐतरेय ब्राह्मण - 2.4
- 4.कौषितकी ब्राह्मण 12.7
- 5.शतपथ ब्राह्मण1-7-1-5
- 6.यजुर्वेद 6.23.
- 7.शतपथ ब्राह्मण 9.4.1.11
- 8. शतपथ ब्राह्मण 8.7.3.21
- 9.छान्दोग्य उपनिषद् 4.16
- 10. द्रष्टव्य अखण्ड ज्योति मासिक पत्रिका, दिसम्बर 1996 पृष्ठ संख्या 33